सांस्कृतिक बनाम नागरिक राष्ट्रवाद

भारत में नागरिक राष्ट्रवाद का ही सिद्धांत स्थापित किया जाता रहा है। लेकिन पिछले कुछ समय से इसके विरूद्ध सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की एक नई और काल्पनिक प्रथा को चलाया जा रहा है। धार्मिक बहुमत की आड़ में चुनावी बहुमत प्राप्त करने का यह सीधा-सरल तरीका अपनाया जा रहा है।

इस संदर्भ से परे भी यह देखा जाना आवश्यक है कि राष्ट्रवाद सांस्कृतिक है या नागरिक? यहाँ यह पूछा जाना चाहिए है कि संविधान ने राष्ट्र बनाया है या राष्ट्र ने एक संविधान को अपनाया और अधिनियमित किया है ? दूसरे शब्दों में, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे उदार मूल्यों से उत्पन्न उत्साह के कारण राष्ट्रवाद की भावनात्मक ऊर्जा सक्रिय है या एक राष्ट्र शुरू से ही अपने जीवन में इन आदर्शों को आत्मसात किए रहता है? राष्ट्रवाद के लिए सांस्कृतिक मूल्यों के बजाय नागरिक को आधार बनाया जाना गलत है।

यह कहना कि भारत का राष्ट्रवाद सांस्कृतिक नहीं है, भारत की राष्ट्रीयता को नकारना और एक भौगोलिक अभिव्यक्ति से इसे बस थोड़ा ही ऊपर मानना है। अंग्रेजों ने ऐसा किया था, क्योंकि वे भारत के राष्ट्रीय जागरण को धता बताना चाहते थे। राष्ट्र को राष्ट्र-राज्य से परे रखने के लिए, आज भारत के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को नकारा जा रहा है, और इसे किसी राष्ट्रीय और सांस्कृतिक आधार के मात्र राजनीतिक निकाय बनाने पर जोर दिया जा रहा है।

विरोधाभासी विचारों का सह-अस्तित्व -

भारत में भाषाओं, सामाजिक रीति-रिवाजों और धार्मिक प्रथाओं की बहुलता का अर्थ यह नहीं है कि सांस्कृतिक निरंतरता का धागा, इन विविधताओं के माध्यम से हिमालय से महासागरों तक और सिंधु घाटी सभ्यता से आज तक भारत में नहीं चल रहा है।

सवाल यह है कि क्यों कुछ लोगों को इसकी विविधता की विरासत में संजोयी एकता नहीं दिखती। इसका कारण शायद यह है कि भारत में ये विरोधाभासी विचार, न केवल जीवन और धार्मिक प्रथाओं से जुड़े हैं, बल्कि ये सह अस्तित्व एकेश्वरवादी सोच से भी परे हैं।

परमात्मा को स्वीकार करने और उस तक संपर्क बनाने के तरीकों में सह-अस्तित्व की जीवंतता सबसे अधिक है। उपनिषद में एक स्थान पर 'एकम् सत् विप्र बहुदा वदंती' कहा गया है। अर्थात् सत्य एक है, लेकिन विद्वजन इसे विभिन्न नामों से बुलाते हैं।

भारत के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को नकारने के पीछे एक बड़ा कारण है। मुस्लिम विजताओं ने धार्मिक और नस्लीय श्रेष्ठता पर शासन करने के अपने अधिकार को आधार बनाया था। स्थानीय संस्कृति के साथ हुई इस्लाम की मिलावट को नकारात्मक रूप में देखा गया। माना गया कि ऐसी मिलावट विजेताओं की शक्ति को कमजोर करने के साथ ही इस्लाम की शुद्धता से भी समझौता करेगी। यही कारण है कि इस्लाम अपनाने वाले भारतीयों से भी उम्मीद की जाती थी कि वे अपनी पुश्तैनी संस्कृति को त्याग दें।

विश्वास और अपनेपन के बीच -

इस बीच प्रश्न उठना चाहिए कि क्या मुसलमान भारत के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को हिंदू राष्ट्रवाद के रूप में ही देखेंगे? जबकि उन्होंने गंगा-जमुनी तहजीब के सतही दिखावे से परे भारत की संस्कृति को पहचाना था।

भारत को उसके अपने प्रतिमान में देखा जाना चाहिए। किसी बाहरी धार्मिक नजरिए से नहीं देखा जाना चाहिए। सांस्कृतिक के बजाय नागरिक राष्ट्रवाद पर जोर दिया जाना, दारूल अहद या दारूल अमन की अवधारणा का प्रतिबिंब है - एक देश जहां मुसलमान शांति से रहते हैं और पूर्ण नागरिक अधिकारों के साथ रहते हैं। इस बात पर बल देते हुए यह भुला दिया गया कि इस प्रकार के देश को गैर-राजनीतिक होना चाहिए, जिसमें राजनीतिक सत्ता पर किसी समूह विशेष का दावा न हो।

मुसलमानों को भारत को पूरी तरह से अपना घर मानने के लिए, विश्वास और अपनेपन के बीच स्व-निर्मित चश्में को छोडना होगा। अपनी सांस्कृतिक जड़ों को पुनर्जीवित करने के लिए पहचान की बुतपरस्ती, हिंदू संस्कृति में मिल जाने के भय और स्वयं निर्मित अलगाव के बहाव को समाप्त करना होगा।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित नजमुल होडा के लेख पर आधारित। 31 जनवरी, 2022